International Referred Research Journal, February, 2012. ISSN- 0975-3486, RNI-RAJBIL 2009/30097;VoL.III *ISSUE-29
शोध पत्र- हिन्दी

प्रेमचन्द्र की कहानियों में सामाजिक विषमता

* डॉ. (श्रीमती) अर्चना सिंह
* विभागाध्यक्ष, हिन्दी, कमला नेहरु महाविद्यालय, कोरबा (छ.ग.)

February 2012

जहां देश की सामान्य जनता आजादी के लिए अपना सब कुछ होम कर देने को कृतसंल्पित थी, वहीं इस देश में अमीरों, जमींदारों और रियासतों के राजा–महाराजाओं का एक ऐसा वर्ग भी था जो कभी सक्रिय और कभी निष्क्रिय रहकर इस राष्ट्रीय उभार को दबाने और कुचलने में ब्रिटिश साम्राज्य की मदद कर रहा था । प्रेमचन्द ने इस वस्तुस्थिति को गहराई से समझाा एवं अपनी तप्त लेखनी से समाज में व्याप्त उन सभी विषमतओं पर प्रहार किया जिससे पतित कही जाने वाली बहनों, भिखारियों, किसानों एवं कामगारों को प्रतिष्ठित किया जा सके ।

''हिन्दी कथा साहित्य के इतिहास में प्रेमचंद के आगमन के साथ पहली बार भारतीय जीवन की वास्तविकता को निकट से झांककर देखने का प्रयास किया गया। दीन दुःखी, दुर्बल प्राचीन रूढ़ियों एवं परम्पराओं से जर्जरित तथा नवयुग के जन जागरण से अपरिचित समाज ही भारत का वास्तविक समाज था, जिसे प्रेमचंद ने अपने कथा साहित्य में स्थान दे उसका यथार्थ चित्रण किया। यथार्थ को प्रस्तुत करने की प्रेमचंद की अपनी दृष्टि थी। ''उन्होंने भारतीय जीवन तथा उसके दलित समाज को देखकर उसका यथा तथ्य चित्रण मात्र नहीं कर दिया, बल्कि उस हीन स्थिति के लिए जिम्मेदार मूल कारणों को जानने के लिए गंभीर चिंतन को भी अपनी कृतियों में स्थान दिया।''

प्रेमचंद अपनी कहानियों के माध्यम से मानव समाज के मध्य एक ऐसा हल प्रस्तुत करने के लिए निरंतर संघर्षशील रहे जिससे कि समाज दम घुटने वाले वातावरण से किसी प्रकार हटकर पवित्र स्वच्छ वायु में सांस ले सके। वे जीवन को उसके नैसर्गिक रूप में केवल देखना ही नही चाहते थे बल्कि जीवन का एक सुनिश्चित रूप उनकी आंखों के समक्ष नाचता रहता था जिसे आदर्श रूप तक वर्तमान समाज को पहुंचा देने की प्रेरणा अपने कथा साहित्य द्वारा करना चाहते थे। ''प्रेमचंद की दृष्टि महलों की ओर न जाकर सबसे पहले झोपड़ियों की ओर गयी। उन्होंने टूटी–फुटी झोपड़ियों में पुआलों पर तड़पती भारतीय आत्माएं देखी, फटे चीथड़ों में सरल और स्वाभावित यौवन के सौष्ठव का अनुभव किया ओर दरिद्रता की चक्की में पिसने वाले दीन जनों में भी महलों सी प्रेम की पीर पाई ।'' प्रेमचंद ने अपने जीवन से एक दीक्षा ली थी, जो उनके कथा साहित्य में सचित्र उभर आयी है। सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक और नैतिक विषमताओं की मार को उनका सहिष्णु हृदय सह नहीं पाया और वह आकुल होकर सहानुभूति के स्वर में बोल उठा, जिससे तत्कालीन जीवन और युग का यथार्थ चित्र उनकी कहानियों में उतर आया है। कठोर मेहनत के बावजूद किसान गरीब अभिशप्त और फटेहाल है क्योंकि जमींदार कारिंदे पुलिस और धर्म के ठेकेदार सबके सब जोंक की तरह चिपककर दृश्य–अदृश्य रूप में उनका खून चूस रहे हैं। प्रेमचंद महाजनी सभ्यता ''निबंध में इसी स्थिति पर टिप्पणी करते हुए लिखते हैं –''मनुष्य समाज दो भागों में बंट गया है, बड़ा हिस्सा मरने और खपने वालों का है, और बहुत ही छोटा हिस्सा उन लोगों का जो अपनी शक्ति और प्रभाव से बड़े समुदाय को अपने बस में किए हुए हैं। इन्हें इस बड़े भाग के साथ किसी तरह की हमदर्दी नहीं, जरा भी रियायत नहीं। उसका अस्तित्व केवल इसलिए है कि अपने मालिकों के लिए पसीना बहाए, खून गिराए और एक दिन चुपचाप इस दुनिया से विदा हो जाए।'' स्थिति कितनी भीषण और विषाक्त हो चुकी है इसका संकेत वह बड़े संजीदा ढंग से करते हैं –''यह हवा इतनी जहरीली हो गई है कि इसमें जीवित रहना कठिन होता जा रहा है। शोषण को अपना अधिकार मानकर चलने वाली इस व्यवस्था से मुक्ति का उपाय केवल एक है–इस समूची व्यवस्था का विनाश और एक वैकल्पिक व्यवस्था का निर्माण। एक नई सभ्यता का सूर्य सुदूर पश्चिम में उदय हो रहा है। जिसने इस नाटकीय महाजनवाद या पूंजीवाद की जड़ खोदकर फैला दी है ।''

''शोषण और अत्याचार पर आधारित इस व्यवस्था का भयावह रूप ''पूस की रात'', ''कफन'', ''सदगति'', ''ठाकुर का कुआ'',''सवा सेर गेहूँ'', ''विध्वंस'', जैसी कहानियों में देखा जा सकता है। ''पूस की रात'' का ''हल्कू'' किसान कहलाने के गौरव का त्याग करके मजदूर ही बने रहने का निर्णय कर लेता है। इसमें प्रकृति का शीतकालीन आक्रमण उस व्यवस्था का हिस्सा बन जाता है जो हल्कू से कंबल खरीदने का हक छीनती है । प्रकृति और सामाजिक व्यवस्था के द्वैत मिट जाने का अहसास इसलिए भी होता है कि हल्कू का मोह भंग प्रकृति

से नहीं सामाजिक व्यवस्था से ही होता है।'' ''कफन'' की बुधिया की मृत्यु के साथ ही साथ घीसू और माधव कुछ करन का निर्णय लेते हैं। वे न तो किसान बनना चाहते हैं और न ही मजदूरी करने में ही उनकी किसी प्रकार की आस्था है। वे गांठ बॉध बैठे हैं कि वर्तमान व्यवस्था में जीवन के लिए सभी प्रयत्न बेकार हैं और जिंदगी को यों ही किसी अज्ञात के हवाले कर देना ही बेहतर है। ''ठाकुर का कुॅआ'' में प्रेमचंद के विरोध का तेवर तीव्र है, पग–पग पर अपमानित एवं शोषित जोखू की वेदना एवं गंगी के क्रोध के एकालाप की निर्मम सच्चाई लेकर इसमें जाति व्यवस्था के अलम्बरदारों से रूबरू होते हैं। वे इस जाति व्यवस्था के माध्यम से व्याप्त उन तमाम मानवघाती मूल्यों को राख कर देना चाहते हैं सिसे किसी जोखू को एक घूॅट पानी के लिए तड़पना न पड़े।'' सदगति का दुखी चमार अपने नाम से भी दुखी ही है जो ईश्वर भक्त पंडित घासीराम से साइत पूछने जाता है तो उनकी गाय को घास डालने से लेकर भूॅसा ढोन और लकड़ी काटने तक सब कुछ भूखे ही करते रहकर सदगति को प्राप्त होता है और चमार होने के कारण कोई उसकी लाश भी उठाने को तैयार नही होता है । सारी सेवा के बावजूद ये लोग नीच, कमीन और अस्पृश्य है ।

शोषण का एक और भयावह रूप ''सवा सेर गेहूं'' में देखा जा सकता है। इसमें शंकर द्वार पर आए साधु के अतिथि सत्कार के लिए ''सवा सेर गेहूं'' ऋण लेता है और जीवन भर गुलामी का पट्टा अपने गले में डाल लेता है। खलिहान में डेढ़ पसेरी गेहूं देकर अपने को उऋण समझ चुका था कि सात वर्ष पश्चात उससे सवा सेर गेहूं का तकादा किया जाता है। साल भर पेट काट कर रूपये देने के बाद भी उसकी ओर 120 रू बाकी निकलते हैं। यह निर्मम शोषण उसके मन में एक किसान से मजदूर बन गए आदमी के मन में श्रम के प्रति निराशा और घृणा का भाव पैदा करती है।

स्वातंत्रय पूर्व जमींदारों, महाजनों, पूंजी पतियों, महंतों की सख्तियों से बेगार प्रथा, जाति प्रथा, के आधार पर मजदूरों का मनमाना शोषण किया जाता था और उससे उन्हें अपार कष्ट उठाना पड़ता था, प्रेमचंद की ''विध्वंस'' कहानी में सन्तानहीन ''विधवा भुनगी गोंडिन'' के माध्यम से व्यक्त किया है। भुनगी भूमिहीन और बेघर है उसके जीवन का एकमात्र सहारा केवल एक भाड़ है। पंडित उदयभान पाण्डे उससे हर तरह का बेगार का काम लेते हैं। उनके अत्याचार से पीड़ित भुनगी में नकार भाव जन्म लेता है और इससे उसकी विद्रोहात्मकता धारदार हो जाती है । शोषण से परेशान अन्ततः भुनगी अपने भाड़ की आग में भाड के साथ स्वयं को मिटा देती है । परन्तु उसका शोकमय विलाप कोई भी नहीं सुनता है । इसके साथ ही साथ ''आंसुओं की होली'', ''विस्मृति'', ''ब्रम्हा का स्वांग'', ''बौड़म'' आदि कहानियों में प्रेमचंद ने सामाजिक वैषम्य को रेखांकित किया है ।

अतः स्पष्ट है कि भारतीय ग्राम जीवन एवं उनकी विषमताओं का अंकन प्रेमचंद के लिए एकमात्र आंदोलन या नारा नहीं था। प्रेमचंद इस बात को अच्छी तरह समझते थे कि अपनी संपूर्ण सादगी, सहजता और स्वेच्छा के बावजूद ध्वंस प्राय सामंती व्यवस्था और नवागत पूंजीवाद के दोहरे दबाव के फलस्वरूप भारतीय किसान की नियति को बदल पाने के लिए एक गहरा और निर्णायक संघर्ष अपेक्षित है ।

संदर्भ ग्रंथ

1- flg] MkW f=Hkou ,oa flg] Mk- fot ; cgknj] lkfgR;d fuc/k] fo'ofo|ky ; idk'ku] okjk.klh] 2008] i"B&108 2- ogh i"B & 1093- if=dk iepUn Lefr] l- verjk;] i"B 258 4- ogh i"B & 2585- lnh'k] MkW fot ; dekj ,oa MkW ukeno] nfyr pruk vkj L=h foe'k] Dykfldy ifCyf'kx diuh] 2009] i"B 202 6- ogh i"B & 202